ISSN Print: 2664-7699
ISSN Online: 2664-7702
Impact Factor: RJIF 8.00
IJHA 2023; 5(2): 39-40
www.humanitiesjournals.net
Received: 02-07-2023
Accepted: 08-08-2023

वंदना कुमारी
शोध–छात्रा, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

डॉ. आनन्द कुमार सिंह
शोध–निर्देशक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

Corresponding Author:
वंदना कुमारी
शोध–छात्रा, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

मध्यवर्गीय समाज का स्वरूप और अमरकांत के उपन्यासों के पात्र

वंदना कुमारी, डॉ. आनन्द कुमार सिंह

DOI: https://doi.org/10.33545/26647699.2023.v5.i2a.64

सारांश
जब तक अर्थ में संचय की बात नहीं थी, तब तक मानव समाज में किसी भी प्रकार के वर्ग की संकल्पना नहीं थी। अर्थ के प्रभुत्व ने मानव समाज की संरचना को ही वदल दिया। मानव समाज ने जब से अपने आपको अर्थ संचय की प्रक्रिया से जोड़ा तब से मानव समाज में बड़े–छोटे की भावना ने घर करना आरंभ कर दिया। बहादुर सिंह परमार का यह कहना उस अधूरे सत्य की ओर संकेत है कि "मानव समाज की कल्पना के साथ हमारे मस्तिष्क में वर्गों का स्वरूप उभरता है और इन वर्गों को ही एक प्रकार से सामाजिक श्रेणीकरण का विशिष्ट रूप कहा जाता है।"[1] मानव समाज की कल्पना उस समय से प्रारंभ हो गयी थी जव मानव समूहबद्ध नहीं था। मानव अपने आपको अकेले असुरक्षित एवं कमजोर महसूस कर रहा था। उसने अपने आपको सुरक्षित एवं मजबूत बनाने के लिए धीरे–धीरे समूहबद्ध होना प्रारम्भ किया। इसकी समूहबद्धता प्रारम्भ में अर्थ पर निर्भर न होकर मानव समाज के वाहुवल पर निर्भर था। उस समय मानव के भीतर की श्रेणियाँ यह बताती हैं कि ताकत वालों का एक दल था उससे कम ताकत वालों का दूसरा तथा सबसे कमजोर तीसरा दल था। श्रेणी अथवा वर्ग को परिभाषित करते हुए प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक मैकाइवर तथा पेज ने कहा है "किसी वर्ग का अर्थ ऐसे श्रेणी अथवा प्रकार से है जिसके अंतर्गत व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह आते हैं।"[2] वर्ग या श्रेणी की जिस बात का उल्लेख मैकाइवर ने किया है उसके बहुत से चरण हैं। वर्ग की अवधारणा का प्रारम्भिक स्वरूप कार्य के आधार पर था वहु प्रचलित चतुष्यवर्ग के जिस बात से आज का समाज नहीं मान पा रहा है।

कूटशब्दः मध्यवर्गीय समाज का स्वरूप, अमरकांत के उपन्यासों, सामाजिक श्रेणीकरण

प्रस्तावना
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र का आधार कार्य था। जिंसवर्ग के अनुसार "वर्ग की संकल्पना दलों के सामाजिक भेद पर आधारित है।"[3] इन्होंने वर्गों के कार्यों के संबंध में उल्लेख किया है– "एक वर्ग के अन्तर्गत ऐसे सदस्य होते हैं जो एक ही वंश से उत्पन्न हों, एक से धंधे मे लगे हो, जो धन की दृष्टि से समान स्तर रखते हों और जिनके जीवन निर्वाह का ढंग भी एक जैसा हो। ऐसे सभी सदस्यों का विचार, भावनाएँ, प्रवृत्तियाँ और व्यवहार समान होते हैं।"[4] वर्ग के संबंध में लेनिन की मान्यता है– "वर्ग व्यक्तियों के बड़े–बड़े दल होते हैं। ये दल एक दूसरे से भिन्न होते हैं जिनकी भिन्नता का आधार व्यक्ति की सामाजिक–उत्पादन–पद्धति के अनुसार निर्धारित किया जाता है। इस अन्तर को उत्पादन के साधनों से ज्ञात कर सकते हैं। यह अन्तर कुछ तो श्रमजीवियों के कार्यों पर आधारित होता है और कुछ सामाजिक धन के अर्जित करने के उपायों से भी ज्ञात किया जा सकता है।"[5] इस प्रकार समाज वैज्ञानिकों की दृष्टि में व्यक्ति या समूह के आर्थिक एवं सामाजिक स्तरों की भिन्नता पर आधारित होता है। इस कारण "एक विशिष्ट प्रकार के आर्थिक और सामाजिक स्तर वाले व्यक्ति एक समूह के अंतर्गत आवद्ध होकर एक विशिष्ट वर्ग का निर्माण करते हैं।"[6] प्राचीन वर्गीय अवधारणाओं के अनुसार वर्ग का निर्माण काम के आधार पर होता था। कार्य की प्रकृति के अनुसार वर्ग का निर्धारण होता था। किसी भी व्यक्ति के वर्ग का निर्धारण उसके जन्म से नहीं किया जाता था बल्कि उसका निर्धारण जन्म के बाद उसके काम के आधार पर होता था। बाद में इस सच्चाई को समाज के चालाक लोगों द्वारा बड़ी चालाकी से अपने पक्ष में करते हुए अपने बाल–बच्चों के वर्ग का निर्धारण जन्म से करते हुए समाज में जाति–पाति की विद्रूपता ला दिये जिसके दंश को यह देश झेल रहा है। दूसरी तरफ वर्ग के निर्माण में व्यक्ति की भी बड़ी भूमिका होती है। वर्ग के भीतर व्यक्तियों की विशेषता बड़ी भूमिका निभाती है। व्यक्ति अपनी विशेष प्रवृत्तियों से व्यक्ति समूह को आकर्षित करता रहता है। आज के समाज में व्यक्ति अपनी आर्थिक हैसियत से तथा बाजारवादी नीतियों के कारण समाज के बहुत बड़े हिस्से को अपनी तरफ आकर्षित करता है। समाज का झुकाव जब इस तरह के लोगों की तरफ होता है उस स्थिति में अर्थ की बड़ी भूमिका होती है। लोग अपनी आर्थिक हैसियत के आधार पर एक दूसरे के नजदीक आते हैं। उनका एक दूसरे के नजदीक आना उनको किसी न किसी वर्ग से जोड़ता है।

मिल्टन एम. जॉर्डन ने इसी तरह के विचार को रखते हुए कहा ''धन, आय, व्यवसायिक स्तर, सामुदायिक शक्ति, दल की विशिष्टता, उपभोग का स्तर और पारिवारिक पृष्ठभूमि व्यक्तियों को इनके वर्गों में प्रतिष्टित कराने वाले आवश्यक तत्व हैं।''[7] इन्साइक्लोपीडिया विटेनिका में वर्ग की अवधारणा के बारे में लिखा गया है ''किसी विशिष्ट वर्ग के व्यक्ति का स्तर उसकी आय, उसकी सम्पत्ति, जीविका, रहन–सहन का स्तर, शिक्षा, उसकी व्यक्तिगत शक्ति जिसके आधार पर वह समाज के अन्य व्यक्तियों के बीच अपनी विशिष्ट स्थिति का निर्माण करता है।"[8] ल्यूक एवरसोल ने वर्ग की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए व्यक्ति के सामाजिक स्तर को निर्णय करने वाले जिन तथ्यों को ज्यादा जरूरी बताया वह इस प्रकार है– "सम्पत्ति, आय, वंश, परम्परा और वैयक्तिक विशेषतायें।" डॉ० मंजुलता सिंह ने वर्ग की अवधारणा स्पष्ट करते हुए कहा है– "वर्ग या श्रेणी किसी समाज का आवश्यक व अनिवार्य अंग होता है, जिसका निर्माण उस समाज के श्रम, उत्पादन तथा वितरण के साधनों के द्वारा होता है। इसके साथ मनुष्य की वंश परम्परा, शिक्षा, आय रहन–सहन का स्तर तथा व्यक्ति की प्रतिभा भी उसे विशिष्ट वर्ग का व्यक्ति प्रतिष्ठित करने में सहायक होती है।''[9] बहादुर सिंह परमार ने वर्ग की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए बताया है– "वर्ग व्यक्तियों का एक ऐसा समूह होता है जिसकी आय के स्रोतों, आचार–विचार, पारिवारिक पृष्ठभूमि, रहन–सहन, शिक्षा तथा प्रतिभा आदि में साम्यता होती है। यह साम्यता ही इन्हें आपस में आकर्षित करती है, फलस्वरूप समाज में एक वर्ग का निर्माण होता है।''[10]

निष्कर्ष

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर वर्ग के बारे में यह कहा जा सकता है कि वर्ग के निर्माण में व्यक्ति समूह के साथ–साथ व्यक्ति का भी महत्वपूर्ण योगदान रहता है। वर्ग के निर्माण में पहले जहाँ व्यक्ति के कार्यों द्वारा व्यक्ति समूह या वर्ग को पहचाना जाता था वहीं अब वर्ग के अस्तित्व का योजन मात्र कार्यों के आधार को लेकर नहीं रह गया। वर्ग अब अनेक नये–नये तथ्यों द्वारा निर्धारित होता है। समाज के वर्गों के विभाजन का सबसे बड़ा आधार अर्थ हो गया है, अर्थ के द्वारा कोई भी व्यक्ति किसी भी वर्ग में बड़ी आसानी से रह सकता है। कुछ परम्परावादी वर्गीय मूल्यों का निर्वाह करने वाला व्यक्ति समूह प्रारंभ में आर्थिक स्थिति में छलांग लगाने वाले व्यक्तियों को भले ही समाजिक आचार–विचार, रहन–सहन, खान–पान, सांस्कृतिक गतिविधि आदि के कारण अपने वर्ग में सम्मिलित न करता हो परन्तु वाद में अर्थ के दबदबे के कारण किसी न किसी वर्ग में बड़ी आसानी से जगह बना लेता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि वर्ग का निर्माण कार्य योजन, आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक स्थिति, खान–पान आदि के द्वारा होता है।

वर्ग निर्धारण में आज बाजार की बड़ी भूमिका है। बाजार द्वारा परोसे गये उपभोक्तावादी वस्तुओं से भी वर्ग का निर्धारण हो रहा है। बाजार के सामानों के द्वारा समाज के लोग किसी भी व्यक्ति को अपने वर्ग में सम्मिलित करते हैं तथा किसी भी व्यक्ति को बड़ी आसानी से निकाल देते हैं।

संदर्भ

1. अमरकांत का कथा साहित्य, वहादुर सिंह परमार, पृ०–11, शिल्पायन, 2007.
2. आर.एम मैकाइवर तथा सी.एच. पेज, पृ०–348,
3. जिंसवर्ग इन्साइक्लोपीडिया ऑफ दि सोशल साइंसेज, जिंसवर्ग, भाग 3, 4 पृ०–535.
4. इन्साइक्लोपीडिया ऑफ दि सोशल साइंसेज भाग 3–4, पृ०–336.
5. लेनिन फंडामेंटल ऑफ मार्कसिज्म लेनिनज्म, पृ०–150.
6. हिन्दी उपन्यासों में मध्यवर्ग, डॉ० मंजुलता सिंह, राजधानी प्रकाशन, 1984, पृ०–2,
7. सोसल क्लास इन अमेरिकन सोसाइटी मिल्टन एम. जार्डन, पृ०–3.
8. इन्साइक्लोपीडिया विटेनिका, भाग 5, पृ०–450.
9. हिन्दी उपन्यासों में मध्यवर्ग, डॉ० मंजुलता सिंह, राजधानी प्रकाशन, 1984, पृ०–2.
10. अमरकांत का कथा साहित्य, बहादुर सिंह परमार, 2007, शिल्पायन, पृ०–11,